RJPP, Vol. 16, No. 2, 2018, ISSN (P) : 0976-3635, (e) :2454-3411 Impact Factor 6.476 (SJIF)
UGC Approved Journal No. 43279

भारतीय राजनीति में हिसांत्मक एवं अहिंसात्मक आन्दोलन की भूमिका

डॉ0 सीमा देवी

असि0 प्रो0, कु0 मायावती राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बादलपुर, गौतमबुद्धनगर (उ0प्र0)

सारांश

विभिन्न प्रकार के आन्दोलनों ने, विभिन्न देशों की राजनीतिक सामाजिक, आर्थिक स्थिति में अविश्वसनीय परिवर्तन करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। भारत भी इन आन्दोलनों से वंचित नहीं रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से यही विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है कि आन्दोलन की भूमिका ने स्वतन्त्रापूर्व व स्वतन्त्रोत्तर भारत में कैसी रही है।

भारत में हिंसात्मक एवं अहिंसात्मक दोनों ही प्रकार के आन्दोलन समय–समय पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं। विभिन्न हिंसात्मक आन्दोलन जैसे–1967 में नक्सलवादी आन्दोलन, ताड़ी विरोधी आन्दोलन 1984 में ऑपरेशन ब्लू स्तर, 1996 में मित्रो नेशनल फ्रन्ट द्वारा सशस्त्र–विद्रोह आदि, 1990 के दशक में भारतीय राजनीति को नवीन दिशा की ओर ले जाने वाले दो प्रमुख हिंसात्मक आन्दोलन (1) मण्डल आयोग (2) राम मन्दिर निर्माण रहे हैं।

दूसरी ओर भारत की राजनीतिक प्रकृति से मेल खाते अहिंसात्मक आन्दोलन भी रहे हैं, जैसे–चिपको आन्दोलन, मलाला युसुफजई के नेतृत्व में महिला सशक्तिकरण सम्बन्धी आन्दोलन, महात्मा गांधी जी के अहिंसात्मक आन्दोलन की भूमिका भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। गांधी जी के समालोचक डॉ0 अम्बेडकर के विभिन्न आन्दोलनों को अनदेखा नहीं किया जा सकता है। सामाजिक वैज्ञानिकों और आन्दोलन कर्ताओं के बीच वर्तमान विचार–विमर्श में नव–सामाजिक आन्दोलन का मुहावरा प्रचलित हो गया है। जैसे–नारी आन्दोलन, पर्यावरण आन्दोलन, शान्ति आन्दोलन आदि कुछ लोगों का कहना है कि नये आन्दोलन उत्तर–आधुनिक समाज के मुद्दो का परिणाम है। आन्दोलन शब्द का प्रयोग पत्रकारों, राजनीतिक एक्टिविस्तो और औसत व्यक्ति द्वारा बढ़े ढीले–ढाले अर्थ में किया जाता है। जिस कारा आन्दोलन की शति को कम या अधिक आँकने का खतरा रहता है। विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि कई आन्दोलन उद्देश्यों की प्राप्ति के पश्चात् समाप्त हो गये तो कुछ आन्दोलनों ने दबाव समूहों या राजनीतिक दलों के रूप में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है।

मूल शब्द *: स्वत:, स्फूर्त जन आन्दोलन, बी0के0यू0, नृजातीयता, गौरवपूर्ण क्रान्ति व रक्तहीन क्रान्ति, प्रत्यक्ष कार्यवाही, प्रवसन*

Reference to this paper should be made as follows:

डॉ0 सीमा देवी,

भारतीय राजनीति में हिसांत्मक एवं अहिंसात्मक आन्दोलन की भूमिका,

RJPP 2018, Vol. 16, No. 2, pp. 25-32 Article No. 4

***Online available at** : http://anubooks.com/?page_id=2004*

आन्दोलन का इतिहास कोई नवीन इतिहास नहीं है, ना ही नवीन शब्दावली, मानव जाति के सिविलाइजेशन के साथ ही विभिन्न आन्दोलनों की उत्पत्ति हुई फिर इन आन्दोलनों का स्वरूप हिसांत्मक रहा हो या अहिंसात्मक आन्दोलन का तात्पर्य विभिन्न विद्वानों ने सीधी कार्यवाही से भी लगाया है। भारत ने स्वतन्त्रता सीधी कार्यवाही से प्राप्त की थी। अतः देश की अधिकांश जनता सत्याग्रह, हड़ताल उग्र प्रदर्शन, बन्द, जन–आन्दोलन, जुलूस को उचित मान लेती है।

बेले के अनुसार वर्तमान भारत में आन्दोलन के निम्न स्वरूप पाये जाते हैं।

1. जुलूस और सभाएँ, 2. बहिष्कार, बंद तथा हड़ताल, 3. अनषन, 4. अवरोध अथवा रूकावट उत्पन्न करना, 5. स्वेच्छा पूर्वक गिरफ्तारी, 6. दंगा **(राय एवं त्रिवेदी–2005)**

टी0डी0 वेलडन के स्मरणीय वर्गीकरण का प्रयोग करते हुए 'आन्दोलन' का पद कई शब्दों की भांति एक **'हुर्रा'** शब्द बन गया है। घनश्याम शाह ने आंदोलन को विद्रोह, बगावत, सुधार और क्रान्ति में वर्गीकृत किया है जिसका उद्देश्य राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन लाना होता है। सुधार सम्बन्धी आन्दोलन प्रत्यक्ष तौर पर राजनीतिक व्यवस्था को चुनौति नहीं देते हैं (शाह–2009) उद्देश्य, विचारधारा, कार्यक्रम, नेतृत्व और संगठन किसी भी प्रकार के आन्दोलन के महत्वपूर्ण निर्णायक तत्व हैं।

डेविड बायले (1962) ने 'अवपीड़क जन विरोध' को कानूनी और गैर–कानूनी विरोधो में बाँटा है। इनके प्रत्येक वर्ग को पुनः हिंसक और अहिंसक विरोध के दो उप–भागों में बाँटा है। कुछ आन्दोलन 'जंगली', 'नागरिक अधिकार', 'अस्पृश्यता–विरोधी', 'भाषाई', 'राष्ट्रवादी' और इसी प्रकार अन्य आन्दोलन के रूप में आ जाते हैं। कुछ अन्य लोगों ने आन्दोलनों का वर्गीकरण सहभागियों के आधार पर किया है जैसे–कृषक, जनजातीय, विद्यार्थी, महिला एवं दलित आन्दोलन, मानव अधिकार एवं पर्यावरण आन्दोलन आदि।

राष्ट्रीय–अर्न्तराष्ट्रीय परिदृश्य पर दृष्टि डाले तो हिंसात्मक एवं अहिंसात्मक दोनें ही प्रकार के आन्दोलनों को सफलतापूर्वक अपने ध्येय की प्राप्ति करते हुए देखा गया है। राजनीतिक इतिहास व राजनीतिक व्यवस्था को समझने के लिए दोनों ही प्रकार के आन्दोलन की प्रकृति व स्वरूप को समझना अत्यन्त आवश्यक है। किसी भी लोकतान्त्रिक शासन व्यवस्था में धरने प्रदर्शन और घेराव जैसे जन–आन्दोलन जनमत प्रकट करने के महत्वपूर्ण माध्यम हैं।

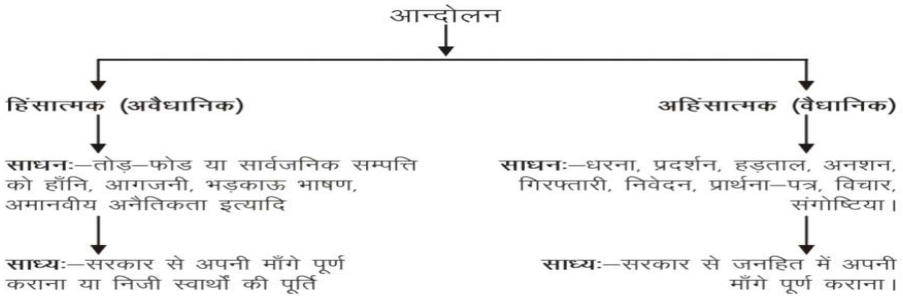

आन्दोलन व लोकतन्त्र

आन्दोलन के माध्यम से जनता अपनी मांगें सरकार से मनवाने का प्रयास करती है, ऐसा करते समय जन–मानस उचित या अनुचित साधनों का प्रयोग करने से भी संकोच नहीं करता है। यशवंतराज के अनुसार आन्दोलन करने के दो कारण हो सकते हैं–(1) आत्मा की आवाज के कारण–सत्याग्रह करना (2) देश और समाज का भविष्य खतरे में। रजनी कोठारी के अनुसार–(क) संसदीय लोकतन्त्र को और अधिक लोकतान्त्रिक बनाना। (ख) संसदीय लोकतन्त्र को और अधिक नायकवादी लोकतन्त्र की ओर ले जाना। (राय, त्रिवेदी–2005)

हिंसात्मक आन्दोलन की प्रकृति

जब विभिन्न प्रकार के आन्दोलन में हिंसा का प्रयोग होने लगता है जैसे–तत्कालीन मन्दसौर में किसान आन्दोलन, छात्रों के हिंसात्मक आन्दोलन, श्रमिक हड़ताल, नवीन राज्यों के पुर्नगठन की मांग, जल–विवाद, नक्सली हिंसा की घटनाएँ, पंजाब, जम्मू–कश्मीर तथा उत्तर–पूर्वी राज्यों में हिंसा, गौ–रक्षा के नाम पर हिंसा को, हिंसात्मक आन्दोलन की श्रेणी में देखा जाता है। इन आन्दोलनों की प्रकृति देखकर प्रतीत होता है कि आज भारतीय जनमानस के जीवन में हिंसा ने अपना प्रमुख स्थान बना लिया है।

हिंसा के प्रकार

भारत में हिंसात्मक घटनाओं को मुख्य रूप से निम्न श्रेणियों में बाँटा जा सकता है।

1. अंतर्जातीय झगड़े तथा हिंसाएँ। 2. साम्प्रदायिक दंगे। 3. उग्रवादी गुटों द्वारा हिंसा। 4. अतिवादी वामपंथी। 5. राजनीतिक हिंसा। 6. हित गुटो तथा व्यवसायिक संगठनों द्वारा हिंसात्मक आन्दोलन। 7. व्यक्तिगत या सामूहिक हिंसा। 8. राज्यों द्वारा प्रोत्साहित हिंसा या सरकारी आंदोलन। 9. विदेशी प्रेरणा। 10. राजनीतिक मांगे, जैसे–राज्यों का पुनर्गठन। 11. कानून व्यवस्था का भंग होना।

भारत में हिंसात्मक गतिविधियों के कारण –

1. निरक्षरता व प्रचलित शिक्षा। 2. बेरोजगारी तथा निर्धनता या आर्थिक स्थिति। 3. जातिवाद तथा साम्प्रदायिकता। 4. पृथकतावाद। 5. राजनीतिक दल व राजनीतिक उत्तरदायित्व का अभाव, आदर्श नेतृत्व की कमी। 6. सरकार और दबाव। 7. प्रशासन की अकर्मण्यता।

भारत में प्रमुख हिंसात्मक आन्दोलन

स्वतन्त्र भारत में उग्र–प्रदर्शन, हिंसा और आन्दोलन की राजनीति की शुरूआत का श्रेय भारतीय साम्यवादी दल को ही है। 1948 में कलकत्ता के साम्यवादी सम्मेलन में जिसे **'कोलकता थीसिस'** भी कहा जाता है, घोषित किया गया कि–**''भारत में क्रान्ति की लहर गतिशील है। क्रान्ति की अन्तिम अवस्था सशस्त्र संघर्ष की अवस्था में आ गई है, यह क्रान्ति जनतान्त्रिक विप्लव का कार्य पूरा कर देगी और उसके साथ ही समाजवाद की स्थापना हो जायेगी।''**

सन् 1967 में पश्चिमी बंगाल में हुए नक्सलवादी आन्दोलन या किसान विद्रोह हिंसक

साधन अपनाते थे। वर्तमान समय में 9 राज्यों के लगभग 75 जिले नक्सलवादी हिंसा से प्रभावित हैं जो अधिकांशतः पिछड़े इलाके और बहुताय आदिवासियों की जनसंख्या वाले क्षेत्र हैं।

आन्ध्र–प्रदेश के ताड़ी विरोधी उक्त आन्दोलन में महिलाओं द्वारा शराब की बिक्री पर पाबंदी की मांग की गई थी। नाराज होकर महिलाओं ने शराब के ठेकेदारों के गुंडों पर हिंसात्मक हमला किया। ताड़ी की बिक्री से अधिक राजस्व प्राप्त होने के कारण सरकार इस पर प्रतिबन्ध नहीं लगा रही थी। (एन0सी0आर0टी0, 2001)

राज्य पुर्नगठन संबंधी प्रमुख आन्दोलन

स्वतन्त्रता के पश्चात् भाषा के आधार पर गठित होने वाले राज्यों में पंजाब राज्य में स्वायत्ता हेतु हिंसा को सन् 1966 में पुर्नगठित किया था।

मिजोरम में लाल डेंगा के नेतृत्व में 'मित्रों नेशनल फ्रन्ट' (1996) स्वतन्त्रता की मांग करते हुए सशस्त्र–विद्रोह एवं बाहरी लोगों के खिलाफ आंदोलन की समस्या आज सम्पूर्ण भारत में देखने को मिल रही है। किसी भी राज्य की स्थानीय जनता दूसरे राज्य से आये अप्रवासियों को बाहरी मानती है। महाराष्ट्र शिव सेना का नारा है ''महाराष्ट्र मराठियों'' के लिए है।

पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले में दशकों पुराना गोरखा आंदोलन पुनः कभी भी भड़क उठाता है। 1980 से षुरू यह आन्दोलन 1986–88 में जोरो पर था।

दूसरी ओर पूर्वोत्तर राज्यों जैसे–असम–आसामी के लिए 1979 से 1985 तक असम आन्दोलन बाहरी लोगों के खिलाफ चले हिंसात्मक आन्दोलन का अच्छा उदाहरण है।

नब्बे के दषक में भारतीय राजनीति को नवीन दिशा की ओर ले जाने वाले दो प्रमुख हिंसात्मक आन्दोलन (1) मण्डल आयोग (2) राम मन्दिर निर्माण है।

सन् 1990 में मण्डल–कमण्डल मुद्दे ने भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में अनेक परिवर्तन किये हैं। राष्ट्रीय मोर्चों की वी0पी0 सिंह सरकार ने मण्डल–आयोग की सिफारिशों जिसके अन्तर्गत अन्य पिछड़ा वर्ग को 27 प्रतिशत आरक्षण स्वीकृत कर लिया। परिणामतः सम्पूर्ण भारत में छात्र–छात्राओं द्वारा विभिन्न स्थानों पर आत्मदाह भी किया गया। सरकार के इस फैसले को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती भी दी गई। यह किस्सा **'इंदिरा साहनी केस'** के नाम से प्रसिद्ध हुआ। (एन0सी0आर0टी0, 2007)

इसी वर्ष राम मन्दिर निर्माण के समर्थकों ने 'कार सेवा' का आयोजन किया। इसके अन्तर्गत 'राम भक्तों' से आह्वान किया गया कि वे राम मन्दिर के निर्माण में श्रमदान करें। सर्वोच्च न्यायालय ने राज्य सरकार को आदेश दिया कि वह विवादित स्थल की सुरक्षा का पूरा इंतजाम करें। 1992 में अयोध्या में जुटे लोगों ने बाबरी मस्जिद को गिरा दिया। परिणाम स्वरूप पूरे देश में हिन्दू–मुस्लिम झडपें हुई। अयोध्या विवाद इतना अधिक विकराल हो गया कि इलाहाबाद हाईकोर्ट से सर्वोच्च न्यायालय पहुँच गया है।

1990 के प्रारम्भ में बीकेयू सभी राजनीतिक दलों से दूर रहकर दबाव समूह के रूप में कार्य करती रही। इस संगठन ने राज्यों में मौजूद अन्य किसान संगठनों के साथ लेकर अपनी कुछ

मांगे मनवाने में सफलता पाई अर्थात 1980 के दशक का यह सबसे ज्यादा सफल सामाजिक आन्दोलन था। (एन0सी0आर0टी0–2007)

विचारणीय प्रश्न है कि स्वतन्त्रता के 70 वर्षों के पश्चात् भी हम अभी तक किसानों के लिए उचित नीति का निर्माण नहीं कर पाये हैं। प्रत्येक सरकार के घोषणा पत्र में किसानों को अनदेखा ही किया गया है। वर्तमान मन्दसौर किसान आन्दोलन में यदि किसान एकजुट हो जाये तो सम्भावना है कि सरकार किसान नीतियों को प्राथमिकता दे, यह तो आने वाला समय ही बतायेगा। कृषक आन्दोलन स्वतन्त्रता के पूर्व और बाद की अवधि में व्यापक रूप से हुए हैं, हमें कृषक समाज की जटिलताओं को समझने के लिए बहुत कुछ करना बाकी है क्योंकि आर्थिक व राजनीतिक व्यवस्था सहित यह समाज तेजी से बदल रहा है।

अहिंसात्मक आन्दोलन

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था एवं विदेश नीति के स्वरूप व प्रकृति का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि भारत की प्रवृत्ति **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** व शान्तिप्रिय राष्ट्र की रही है भारत के साथ अभी तक जितने भी युद्ध हुए। उनकी शुरूआत भारत द्वारा कभी नहीं की गई और ना ही भारत देश ने कभी अन्य देश पर आक्रमण किया है।

तात्पर्य है कि आन्तरिक व बाह्य दोनों ही सन्दर्भों में भारत ने हिंसात्मक साधनों से दूरी बनाने का प्रयास किया है। इतिहास साक्षी है कि प्राचीन समय से लेकर वर्तमान समय तक अनेक अहिंसात्मक आन्दोलनों ने देश–विदेश कि राजनीतिक व्यवस्था में आवश्यकतानुसार अनेक परिवर्तन किये हैं। अहिंसात्मक आन्दोलन के अनेक उदाहरण हमें विश्व राजनीति में भी देखने को मिलते हैं जैसे–सन् 1688 की ब्रिटेन की 'गौरवपूर्ण या रक्तहीन क्रान्ति' जिसने लोकतान्त्रिक व्यवस्था में अभूतपूर्व परिवर्तन किये हैं। 'अधिकारों की घोषणा' आगे चलकर Bill of Right-1689 के रूप परिणित हुई।

'चिपको आन्दोलन' पर्यावरण आन्दोलन की ही एक श्रृंखला है जिसकी शुरूआत उत्तराखण्ड राज्य के छोटे से दो–तीन ग्राम से हुई है। यह आन्दोलन महिलाओं की सक्रिय भागीदारी एवं अहिंसात्मकता का प्रतीक है। उक्त आन्दोलन की सफलता का ही परिणाम रहा कि उत्तराखण्ड सरकार ने 15 वर्षों तक पहाड़ी क्षेत्रों में पेड़ों की कटाई पर पूर्णतः रोक लगा दी है ताकि यह क्षेत्र पुनः वानच्छादित हो जाये।

इसी क्रम में प्रसिद्ध एक्टिविस्ट बच्चों व महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण हेतु सक्रिय **मलाला युसुफजई** ने 2008 में **'हॉव डेयर दा तालिबान टेक अवे माई बेसिक राईट टू एजूकेशन'** विषय मलाला तथा सबसे पसंदीदा पुस्तक के साथ पोस्ट तस्वीर **'बुक्स नॉट बुलेट्स'** अहिंसक आन्दोलन का प्रमुख उदाहरण है। भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में गाँधी जी ओर अहिंसा एक दूसरे के पूरक माने जाते हैं। गाँधी जी के प्रमुख अहिंसात्मक आन्दोलन असहयोग आन्दोलन सविनय अवज्ञा आन्दोलन, भारत छोड़ो आन्दोलन का उदाहरण हैं।

सर्वप्रथम सन् 1917 में बिहार के चम्पारन जिले में मजदूरों के साथ मिलकर सत्याग्रह किया तत्पष्चात् ब्रिटिश सरकार की साम्राज्यवादी नीतियों से शुब्द गाँधी जी ने सन् 1920 में

असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ किया। इस आन्दोलन के दो पक्ष थे–**नकारात्मक एवं सकारात्मक।** नकारात्मक पक्ष में सरकारी नीतियों एवं संस्थाओं का बहिष्कार किया गया था।

सकारात्मक पक्ष में राष्ट्रीय विद्यालय और महाविद्यालयों की स्थापना निजी पंचायत, स्वदेशी का उपयोग एवं प्रचार आदि थे। इस आन्दोलन को अभूतपूर्व जन सहयोग प्राप्त हुआ। 1922 में चौरा–चोरी काण्ड के पश्चात् 11 फरवरी को असहयोग आन्दोलन स्थगित कर दिया गया जिसकी चारों ओर आलोचना हुई थी। 1930 में गाँधी जी ने 'डाण्डी' नामक ग्राम में नमक बनाकर सरकारी कानून का उल्लंघन किया और 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' का प्रारम्भ किया। इस आन्दोलन के प्रारम्भ होने की पृष्ठभूमि वायसराय द्वारा गाँधी जी की ग्यारह सूत्रीय मांगों को अस्वीकार करना था। जिसका विरोध अहिंसात्मक साधन द्वारा किया गया। (बिपिन चन्द्र, 1990)

महात्मा गाँधी एवं डॉ0 अम्बेडकर राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने वाले प्रमुख व्यक्तियों में से थे। दोनों का उद्देश्य भारत को स्वतन्त्रता दिलाना था। डॉ0 अम्बेडकर भारत की बाह्य स्वतन्त्रता के साथ ही समाज की आन्तरिक स्वतन्त्रता के भी पक्षधर थे। भारत का वंचित व अस्पृश्य वर्ग दोहरी गुलामी में जीवनयापन कर रहा था। बाह्य रूप से ब्रिटिश उपनिवेश के गुलाम व आन्तरिक रूप से डॉ0 अम्बेडकर ने वर्ण व्यवस्था द्वारा रोपित गुलामी का विरोध किया। संवैधानिक संसाधनों में विश्वास रखते हुए ब्रिटिश सरकार से अनेक सुधारात्मक कार्य कराए जैसे–कामगारो के कार्य समय निश्चित करवाना, समाज में समानता व न्याय की स्थापना करने हेतु छुआछूत, भेदभाव, जातिवाद जैसी कुरितियों को समाप्त करने का अथक प्रयास किया।

डॉ0 अम्बेडकर के विभिन्न संवैधानिक व अहिंसक आन्दोलनों ने तत्कालीन सामाजिक व राजनीतिक परिस्थितियों को प्रभावित किया है। तत्कालीन ब्रिटिश सरकार से प्रार्थना पत्र, निवेदन, जुलूस, सभा, विचार गोष्ठी, भाषण व सामाजिक आन्दोलनों के माध्यम से अनेक सुधार किये थे।

महाराष्ट्र के महार लोगों के आंदोलनों को बहुधा एक अखिल भारतीय आंदोलन के रूप में प्रक्षेपित किया जाता है। महाराष्ट्र में डा0 अम्बेडकर द्वारा 1920 के दशक में अस्पृश्यता विरोधी एक बड़े आन्दोलन की शुरूआत की गई। यह आन्दोलन विभिन्न रूपों में आज भी जारी है हांलाकि आन्दोलन की जड़े मुख्यतः महाराष्ट्र में गड़ी हुई है, इसने एक अखिल भारतीय चरित्र ग्रहण कर लिया है। डा0 अम्बेडकर ने अस्पृश्यों की प्रगति की संभावनाओं के राजनीतिक साधनों के प्रयोग से देखा। इनके प्रयोग द्वारा ही आधुनिक समाज में उच्च वर्गों के साथ सामाजिक और आर्थिक समता को प्राप्त किया जा सकता है। (नाथ, 1987)

महाराष्ट्र के दलितों ने दलित पैंथर आंदोलन की 1970 में शुरूआत की। 1972 में दलित युवाओं का एक संगठन दलित पैथंर्स बनाया गया, जो अहिंसात्मक साधनों के साथ आज भी सक्रिय हैं। (एन0सी0आर0टी0–2007)

प्रारम्भ में यह आन्दोलन महाराष्ट्र के नगरीय क्षेत्रों तक सीमित रहा जो गुजरात, कर्नाटक, आंध्र–प्रदेश, उत्तर–प्रदेश और अन्य राज्यों में फैल गया। यह संगठन अनुसूचित जातियों के प्रति किये गये अन्यायों के विरूद्ध प्रदर्शनों को संगठित करता है इनके अधिकांश कार्यकलाप, मौलिक

साहित्य जैसे–कविताएँ, कहानियाँ, नाटकों के प्रकाशन द्वारा किये जाते है। (भोइटे एवं भोइटे)

मेरठ में किसान आन्दोलन (भकायू) :–1988 में उत्तर प्रदेश के मेरठ शहर में 20 हजार किसानों द्वारा बिजली की दर में वृद्धि का विरोध में किसानों का उक्त आन्दोलन पूर्णतः अनुशासित एवं अहिंसात्मक आन्दोलन की श्रेणी में आता है।

वर्तमान समय में आन्दोलन की प्रासंगिता

विभिन्न आन्दोलनों की पृष्ठभूमि का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि आन्दोलन हिंसात्मक हो या अहिंसात्मक ये तभी होते हैं जब सत्ता या निर्वाचित सरकार के प्रति जनमानस में असंतुष्टता होती है। इतिहास में हमेशा से भिन्न–भिन्न प्रकार के आन्दोलन होते रहें हैं जिन्होंने राजनीतिक व सामाजिक व्यवस्था के स्वरूप में ही पूर्णतः परिवर्तन कर दिया। सभ्य समाज के निर्माण में आन्दोलनों की महत्ता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा सन् 1948 में मानवीय अधिकारों की घोशणा के साथ–साथ समानता एवं न्याय की संकल्पना सुदृढ़ हुई है। विश्व के लगभग सभी देशों में मानवीय अधिकारों के साथ ही मौलिक अधिकारों का गठन किया गया है।

संविधान के भाग–3 अनुच्छेद–19 में भाषण तथा अभिव्यक्ति सम्मेलन करने, संघ बनाने की स्वतन्त्रता है। भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता लोकतंत्रात्मक राजव्यवस्था के संचालन का एक अनिवार्य अंग है, लोकतन्त्र का अर्थ है सहमति से किया गया शासन और जब तक राजनीतिक व अन्य विषयों पर चर्चा करने की सहमति नहीं होगी तब तक उस राजव्यवस्था को लोकतन्त्र नहीं कहा जा सकता है। विभिन्न आन्दोलन देश की राजनीतिक दिशा निर्धारित करने की क्षमता रखते रहे हैं। निर्वाचित सरकार का सार्वजनिक विरोध और प्रत्यक्ष कार्यवाही हमारे लोकतन्त्र के सहचर प्रतीत हैं।

राजनीतिक नेताओं और समाज सुधारकों द्वारा अपने कार्यकत्ताओं को **'आन्दोलन'** कहना एक फैशन बन गया है। आजकल सामाजिक वैज्ञानिकों और आंदोलकर्ताओं के बीच वर्तमान विचार–विमर्श में 'नव सामाजिक आंदोलन का मुहावरा प्रचलित हो गया है। कुछ लोग इस पद टर्म का प्रयोग ऐसे आन्दोलन के लिए करते हैं जो उनकी दृष्टि में नये हैं, जैसे नारी (महिला) आन्दोलन, पर्यावरण आन्दोलन, शान्ति आन्दोलन आदि कुछ लोगों का महना है कि नये आन्दोलन उत्तर–आधुनिक समाज के मुद्दों का परिणाम है। (सिंह–2001)

सामाजिक आन्दोलनों की वैचारिक संरचना को समझकर आंद्रे गुण्डर फ्रैंक और मार्ता फून्टस ने सामाजिक राजनीति आन्दोलन में अन्तर प्रदर्शित किया है इनका मानना है कि सामाजिक आन्दोलन राज्य सत्ता के लिए प्रयास नहीं करते हैं, ये सत्ता की अपेक्षा स्वायत्ता की मांग अधिक करते हैं। टी0के0 उम्मन मानते है कि आंदोलनों में न तो विद्यमान व्यवस्था को पूर्णतः उखाड़ फैकने की शक्ति होती है और नही वे पारम्परिक संरचना को पूर्णतः बेदखल कर सकते हैं। यह सत्य है कि इन आंदोलनों का नेतृत्व वर्तमान समय में मध्यम वर्ग से आ रहा है, तथापित ये नेतागण मुख्यतः वंचित वर्गों और समुदायों को प्रभावित करने वाले मुद्दों को उठाते हैं। आन्दोलनकर्ता विभिन्न सामाजिक स्तरो, वर्गों या कई सामाजिक समूह से होते है। (शाह

घनश्याम–2009), विचारणीय बिन्दु यह है कि कई आन्दोलनों पर अभी तक कोई अन्वेक्षण नहीं हुआ है, राजनीतिक वैज्ञानिकों और सामाजिक इतिहासकारों ने इस क्षेत्र की लगभग उपेक्षा की है क्योंकि ऐसे कई स्थानीय आंदोलन है जिनमें सामूहिक रूप से दलित लोग भेदभाव और अत्याचारों के खिलाफ प्रदर्शन करने के लिए अपने से प्रवसन करते हैं। एक अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न है किसी आन्दोलनों में भाग लेने वाले लोगों की कितनी संरचना उसे हमें जन आन्दोलन कहने के योग्य बनाती है। 'आन्दोलन' शब्द का प्रयोग पत्रकारों, राजनीतिक एक्तिविस्टों और औसत व्यक्ति द्वारा बड़े ढीले–ढाले अर्थ में किया जाता है। अतः आन्दोलन की शक्ति का कम या अधिक आंकने का खतरा रहता है। विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि कई आन्दोलन उद्देश्यों की प्राप्ति के पश्चात् समाप्त हो गये तो कुछ आन्दोलनों ने दबाव समूहों या राजनीतिक दलों के रूप में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है।

सन्दर्भ

त्रिवेदी, आर0एन0 व राय, एम0पी0, 2005, *भारतीय राजनीतिक व्यवस्था,* कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, पृ0सं0–**529**

बायले, डेविड एच, 1962, *दि पैडेगोगी ऑफ डेमोक्रेसी: कोरसीव पब्लिक प्रोटेस्ट इन इण्डिया, दि अमेरिकन पॉलिटकल सांइस रिव्यू,* 56(1) सितम्बर

त्रिवेदी, आर0एन0 व राय, एम0पी0 पूर्वोक्त, पृ0सं0 **534–535**

स्वतन्त्र भारत में राजनीति, 2007, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, श्री अरविन्द्र मार्ग, नई दिल्ली, पृ0सं0–**137**

स्वतन्त्र भारत में राजनीति–पूर्वोक्त, पृ0सं0–**182**

शाह, घनश्याम, पूर्वोक्त, पृ0सं0–**23**

चन्द्र, बिपिन (1990), *भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष,* हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृ0सं0–**139, 211, 366**

नाथ, त्रिलोक, 1987, *पॉलिटिक्स ऑफ द डिप्रेस्ड क्लासिस,* दिल्ली, डयूपिटी प्रकाशन।

स्वतन्त्र भारत में राजनीति, उपरोक्त

भोइटे, उत्तम एण्ड मोइटे, अनुराधा, 1977, *'द दलित साहित्य मूवमेन्ट इन महाराश्ट्रा ए सोशियोजॉजिकल एनालिसिस,* सोशियोलोजिकल बुलेटन, 26(1) मार्च।

स्वतंत्र भारत में राजनीति, पूर्वोक्त

सन्धू, नरिन्द्र सिंह, 2001, *'फैडूयलिस्म पिजेन्ट मूवमेन्ट एण्ड प्रोसिस ऑफ लैन्ड, रिफार्मा इन पटियाला'*, इन लेन्ड रिफार्म इन इण्डिया इन्टरवेनशन फार एगरेरियन कैपिटल ट्रांस फोरमेशन इन पंजाब एण्ड हरियाना, वाल्यूम–6, सम्पादिता, सुचा सिंह गिल, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।